P.G.S NATIONAL COLLEGE OF LAW, MATHURA

Paper-VI **Paper Name- Contract II** **Unit -5**

Q1. निम्नलिखित की व्याख्या कीजिये ।

(अ) इच्छाधीन भागीदारी ।

(ब) एक दिवालिया भागीदार के अधिकार ।

(स) एक फर्म के अपंजीकरण के प्रभाव ।

(द) भागीदारी फर्म भंग किये जाने के लिए विभिन्न ढंग ।

उत्तर-(अ) इच्छाधीन भागिता (Partnership at will) - भारतीय भागिता अधिनियम की धारा 7 के अनुसार, "जहाँ कि भागीदारों की पारस्परिक संविदा द्वारा उनकी भागिता की अस्तित्वावधि या उनकी भागिता के पर्यवसान के लिए कोई उपबंध नहीं किया गया है, वहाँ वह भागिता 'इच्छाधीन भागिता' होती है। "

When no provision is made by contract between the partners for the duration of their partnership, or for the determination of their partnership, the partnership is 'partnership at will. [Sec. 7]

इस धारा को देखते हुए इच्छाधीन भागिता तब समझी जाती है, जबकि भागीदारों ने करार द्वारा न तो भागिता की अवधि को निश्चित किया हो और न ही इसके समापन के ढंग को निश्चित किया हो। ऐसी भागिता को किसी भागीदार द्वारा किसी भी उचित समय पर (at reasonable time) अन्य भागीदारों को सूचना देकर समाप्त किया जा सकता है। इसके सम्बन्ध में भारतीय भागिता अधिनियम की धारा 43 भागीदार को इच्छाधीन भागिता के समाप्त करने का अधिकार प्रदान करती है। इस धारा का कहना है कि "जहाँ कि भागिता इच्छाधीन है, वहाँ किसी भागीदार द्वारा अन्य सब भागीदारों को फर्म भंग कर देने के अपने आशय की लेखनबद्ध सूचना दिये जाने पर फर्म भंग की जा सकेगी।"

फर्म उस तारीख से, जो तारीख सूचना में भंजन के लिए निश्चित है, समाप्त हो जायेगी और यदि कोई तारीख निश्चित नहीं है, तो सूचना के संसूचित होने की तिथि में समाप्त हुई मानी जायगी।

लेकिन इच्छाधीन भागिता के सम्बन्ध में कानून किसी भी भागीदार को ऐसा अधिकार प्रदत्त नहीं करता कि वह किसी अनुचित समय पर फर्भ भंग कर देने के अपने आशय की सूचना देकर कोई विशेष लाभ प्राप्त कर ले [Feathersfon Hough Vs. Fenwick (1810) 17 Ves, 298, 309]. कोई भागिता इच्छाधीन है अथवा नहीं, यह भागिता संलेख की बनावट पर निर्भर है। [Moss Vs Elphicr (1910) I.K. B. 846]

इच्छाधीन भागिता के समापन के सम्बन्ध में एक भागीदार के लिए यह उचित है कि वह फर्म को भंग कर देने के अपने आशय की सूचना में फर्म के भंजन के लिए कुछ समय अवश्य दे और ऐसी सूचना किसी विशेष परिस्थिति में ही दे। मुल्ला ने इन दो बातों को इच्छाधीन भागिता की संगत स्वीकार किया है ।

(ब) एक दिवालिया भागीदार के अधिकार—

भारतीय भागिता अधिनियम की धारा 34 के अनुसार-

(1) जहाँ कि फर्म का कोई भागीदार दिवालिया न्याय निर्णीत कर दिया गया है, वहाँ वह उस न्याय निर्णय के आदेश की तिथि से फर्म में भागीदार के रूप में नहीं रहेगा, भले ही उसके द्वारा फर्म समाप्त हुई हो अथवा नहीं।

(2) जहाँ भागीदारों के मध्य हुई संविदा के अधीन किसी भागीदार के दिवालिया न्याय-निर्णी किए जाने पर भी फर्म समाप्त नहीं हो जाती है, वहाँ ऐसे न्याय-निर्णीत भागीदार की सम्पदा (estate) किसी ऐसे फर्म के कार्य के लिए और फर्म उस दिवालिया के किसी ऐसे कार्य के लिए दायी नहीं है, जो उस तिथि के बाद किया गया है, जिस तिथि को न्याय निर्णयन का आदेश दिया गया है।'

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

धारा 34 की उपधारा (1) यह स्पष्ट रूप से बताती है कि जैसे ही फर्म को कोई भागीदार दिवालिया करार कर दिया जाता है, वह उस फर्म में भागीदार के रूप में नहीं समझा जा सकता।

दिवालिया करार दिया जाते ही उसका सम्बन्ध फर्म से टूट जाता है, चाहे फर्म उसके दिवालिया होने के परिणामस्वरूप भंग हुई हो या नहीं हुई हो। किसी भागीदार के दिवालिया हो जाने से फर्म से उसका सम्बन्ध टूट जाता है; किन्तु फर्म नहीं टूटती। यदि भागीदारों ने अपने मध्य कोई ऐसी संविदा कर ली है कि किसी एक भागीदार के दिवालिया होने पर फर्म नहीं टूटेगी--इसका आशय यह हुआ कि किसी भागीदार का दिवालियापन फर्म को आवश्यक रूप से भंग नहीं करता, बल्कि उसका मंग होना भागीदारों के मध्य हुई संविदा पर आधारित होता है।

धारा 34 की उपधारा (2) फर्म के कार्यों के लिए दिवालिया भागीदार के दायित्व एवं दिवालिया भागीदार के कार्यों के लिए फर्म के दायित्व का विवेचन करती है। इस उपधारा के अनुसार, जहाँ कोई फर्म भागीदारों मध्य संविदा के अधीन किसी भागीदार के दिवालिया करार दिए जाने पर समाप्त नहीं होती, वहाँ ऐसे दिवालिया करार दिये गये भागीदार की सम्पदा फर्म के उन कार्यों के लिए दायी नहीं होती, जो कार्य उसके दिवालिया करार दिये जाने वाले आदेश की तिथि के बाद फर्म द्वारा किये गये हों और फर्म भी ऐसे दिवालिया भागीदार के किसी कार्य के लिए दायित्वा धीन नहीं होती, जो उसने अपने दिवालिया निर्णीत दिए जाने वाले आदेश की तिथि के बाद फर्म की ओर से किये हों। यहाँ दिवालिया भागीदार के दायित्व के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण बात यह है कि दिवालिया करार किये जाने के बाद किये गये फर्म के कार्यों के सम्बन्ध में अपने दायित्व से मुक्ति के लिए दिवालिया व्यक्ति को सार्वजनिक सूचना देना आवश्यक नहीं है और न ही ऐसी सूचना फर्म के किसी भागीदार द्वारा दी जानी आवश्यक है। बिना सूचना दिये ही दिवालिया व्यक्ति फर्म के ऐसे कार्यों के लिए एवं फर्म दिवालिया के ऐसे कार्यों के लिए, जो न्याय निर्णयन के आदेश की तिथि के बाद किये गये हों, अपने दायित्वों से मुक्त हो जाते हैं।

एक भागीदार के दिवालिया हो जाने के प्रभाव (Effects of insolvency of a Partner) --एक भागीदार जो दिवालिया करार कर दिया जाता है, उसके दिवालिया हो जाने से निम्नांकित प्रभाव उत्पन्न होते हैं-

(1) एक भागीदार, जिसको दिवालिया करार कर दिया गया है, उस तिथि से फर्म में भागीदार के रूप में नहीं रहता, जिस तिथि को दिवालिया करार दिया जाने वाला आदेश (Order of Adjudication) पास किया गया था।

(2) भागीदारों के मध्य हुई संविदा के अधीन रहते हुए किसी भागीदार के दिवालिया करार दिये जाने पर, फर्म समाप्त हो जाती है --धारा 42 (ग) । इसका आशय यह है कि साधारणतया धारा 42 (घ) के प्रभाव से किसी एक भागीदार के दिवालिया हो जाने पर फर्म समाप्त हो जायगी, परन्तु जहाँ भागीदारों ने ऐसी संविदा की है कि किसी भागीदार के दिवालिया होने पर फर्म समाप्त न होगी, वहाँ वह फर्म इस प्रकार समाप्त नहीं होती।

(3) ऐसे दिवालिया की सम्पदा (estate) फर्म के उन कार्यों के लिए दायी न होगी, जो कि फर्म द्वारा न्याय निर्णयन के आदेश की तिथि के बाद किये गये हैं।

(4) फर्म भी ऐसे दिवालिये के उन कार्यों के लिए दायी नहीं रहेगी, जो दिवालिये द्वारा न्याय-निर्णयन के आदेश की तिथि के बाद किए गए हों।

(5) दिवालिया हो जाने पर, फर्म में ऐसे दिवालिये का हिस्सा राजकीय प्रापक (Official Recciver) में निहित हो जायगा जिसे फर्म के हिसाब की माँग करने का अधिकार होगा, किन्तु फर्म के कारोबार के प्रबंध में कोई अधिकार प्राप्त न होगा।

(स) एक फर्म के अपंजीकरण के प्रभाव--(1) फर्म के पंजीकृत (Registered) न कराने से उत्पन्न प्रभावों का वर्णन मागिता अधिनियम की धारा 69 में किया गया है, जिसके अनुसार--(1) संविदा से उत्पन्न या इस अधिनियम द्वारा प्रदान किये गये अधिकारों को प्रवर्तित (Enforce) कराने हेतु कोई वाद किसी व्यक्ति के द्वारा या निमित्त, जो फर्म के भागीदार के रूप में वाद कर रहा है, जब तक कि पंजीकृत न हो और वाद प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति फर्मों के रजिस्टर में फर्म के भागीदार के रूप में लिखा न हो या रह चुका हो, फर्म के विरूद्ध या किसी व्यक्ति के विरूद्ध, जिसके बारे में अधिकथित है कि वह फर्म में भागीदार है या रह चुका है, संस्थित (Instituted) नहीं किया जा सकेगा। **{ धारा 69 (1)}**

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

स्पष्टीकरण--कोई भागीदार या उसके द्वारा नियुक्त कोई व्यक्ति आपसी संविदा से पैदा होने वाले या भागिता अधिनियम द्वारा दिये गये किसी अधिकार को प्रवर्तित कराने के फर्म के खिलाफ फर्म के किसी विद्यमान या भूत भागीदार के खिलाफ मुकदमा दायर नहीं कर सकता है। यदि फर्म पंजीकृत नहीं हैं और वाद प्रस्तुत करने वाले का नाम फर्मों के रजिस्टर में फर्म के भागीदार के रूप में लिखा नहीं है ।

(2) संविदा से उत्पन्न अधिकार के प्रवर्तित कराने के लिए फर्म के द्वारा या निमित्त किसी अदालत में कोई वाद जब तक कि फर्म पंजीकृत न हो और वाद करने वाले व्यक्ति फर्मों के रजिस्टर में फर्म के भागीदारों के रूप में लिखे न हों या न रह चुके हों, किसी अन्य पक्षकार के विरूद्ध संस्थित नहीं किया जायगा**। { धारा 69 (2)}**

स्पष्टीकरण- - फर्म द्वारा अथवा उसकी तरफ से किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा किसी संविदा से पैदा होने वाले किसी अधिकार को प्रवर्तित करने के लिए किसी तीसरे पक्षकार के खिलाफ वाद प्रस्तुत नहीं किया जा सकता, यदि फर्म की रजिस्ट्री नहीं हुई है और वाद प्रस्तुत करने वाले व्यक्तियों का नाम फर्मों के रजिस्टर में लिखा न हो।

(3) उपधारा 1 और उपधारा 2 में उपबंध प्रतिपादन के दावे को या संविदा से उत्पन्न अधिकार के प्रवर्तित कराने के लिए अन्य कार्यवाहियों पर भी लागू होंगे**। {धारा 69 (3)}**

स्पष्टीकरण -- धारा 69 की उपधारा 1 एवं 2 में वर्णित अयोग्यताएँ प्रतिपादन के दावे (A claim of set-off) अथवा किसी संविदा से पैदा हुए अधिकारों को प्रवर्तित कराने की कार्यवाहियों के सम्बन्ध में भी लागू होंगी।

फर्म के अपंजीकरण का निम्न अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता (The fol owing rights are not affected by the non-registration of firm).

(1) किसी भागीदार का फर्म को विघटित करने के लिए अथवा विघटित हुई फर्म का हिसाब गने के लिए अथवा विघटित हुई फर्म की सम्पत्ति को बेचने के अधिकार को प्रवर्तित कराने के लए वाद दायर करने का अधिकार,

(2) किसी राजकीय आदाता (Official receiver) का किसी दिवालिया भागीदार की सम्पत्ति को प्राप्त करने का अधिकार,

(3) जिन फर्मों का कारोबार भारतवर्ष में नहीं है, उनके भागीदारों के अधिकार,

(4) सौ रूपये तक का वाद अथवा प्रतिपादन का दावा भी प्रभावित नहीं होगा।

धारा 69 के सम्बन्ध में यह बात महत्वपूर्ण है कि यह धारा 1 अक्टूबर, 1933 को लागू हुई, जबकि भागिता अधिनियम, 1 अक्टूबर, 1932 को लागू हो चुका था।

धारा 69 में वर्णित अयोग्यताएँ संयुक्त हिन्दू परिवार (Joint Hindu family) के फर्मों पर लागू नहीं होतीं; क्योंकि संयुक्त हिन्दू परिवार की फर्म भागिता फर्म से भिन्न होती है।

यदि फर्म ने या फर्म के किसी भागीदार ने फर्म के पंजीकृत होने से पहले कोई वाद प्रस्तुत किया है, तो यह बाद चलने योग्य नहीं होगा। यदि वाद प्रस्तुत किये जाने से पहले पंजीकरण का प्रार्थना-पत्र दिया गया है और वाद प्रस्तुत किये जाने के बाद फर्म वास्तव में पंजीकृत हुई है, तब भी उस दशा में वह वाद निष्फल रहेगा। कहने का आशय है कि फर्म के वास्तविक रूप से पंजीकृत होने ॐ पश्चात् ही फर्म या उसके किसी भागीदार द्वारा प्रस्तुत किया गया वाद चलने काबिल होगा।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

द) भागीदारी फर्म भंग किये जाने के लिए विभिन्न ढंग---- **फर्म के भंजन के विभिन्न तरीके (Different modes of dissolution of firm)**-फर्म के -भंजन के विभिन्न तरीकों का वर्णन अधिनियम की धाराओं 40, 41, 42, 43 एवं 44 में किया गया है, जिनके अनुसार उनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है

(1) भागीदारों द्वारा किये गये करार द्वारा पंजन (Dissolution by agreement •made by partners) --जिस प्रकार से भागिता का जन्म अनुबंध से होता है, उसी प्रकार समी भागीदारों की सहमति से करार द्वारा फर्म को समाप्त किया जा सकता है। भागीदार आपसी करार द्वारा यह तय कर सकते हैं कि किसी अमुक घटना (Certain particular event) के घटने पर फर्म विघटित हो जायेगी। उस दशा में करार की शर्त के अनुसार उस विशेष घटना के घटते ही फर्म विघटित हो जायेगी। फर्म का ऐसा विघटन करार द्वारा विघटन कहलाता है।

(2) आवश्यक रूप से फर्म का भंजन (Compulsory dissolution of firm)-कमी कभी किन्हीं दशाओं में फर्म अनिवार्य रूप से भंजित हो जाती है। वे दशाएँ निम्न प्रकार हैं-

(अ) यदि फर्म के सभी भागीदार केवल एक भागीदार को छोड़कर या फर्म के सभी भागीदार दिवालिया करार कर दिये जायें। इसके सम्बन्ध में यह महत्वपूर्ण है कि एक या एक से अधिक भागीदारों के दिवालिया करार कर दिये जाने से फर्म विघटित नहीं होती, यदि शेष भागीदार दो या दो से अधिक हैं, वे योग्य हैं एवं फर्म के कारोबार को आगे चलाने का करार करते हैं।

उस दशा में फर्म के विघटन को इस आधार पर आवश्यक बताया गया है कि किसी एक व्यक्ति से फर्म चालू नहीं रह सकती है। फर्म को चालू रखने के लिए कम से कम दो व्यक्ति आवश्यक हैं! अतः जहाँ फर्म के सब भागीदार दिवालिया करार कर दिये जाते हैं या एक को बाकी सब भागीदार दिवालिया करार कर दिये जाते हैं, तो फर्म को चालू रखना स्वतः असम्भव हो जाता है।

(ब) किसी ऐसी घटना के घटित होने से जिसके परिणामस्वरूप फर्म के कारोबार को चालू रखना या भागीदारों के लिए भागिता को चालू रखना अवैधानिक (Unlawful) हो जाय, तो उस घटना के घटते ही फर्म अनिवार्य रूप से विघटित हो जाती है। उदाहरण के लिए, 'अ' और 'ब' किसी अमुक वस्तु के कारोबार में भागीदार हैं। बाद में सरकार द्वारा उस वस्तु में कारोबार करना अवैधानिक घोषित कर दिया जाता है, तो 'अ' और 'ब' के मध्य अनिवार्य रूप से भागिता विघटित हो जाती है।

(3) कुछ आकस्मिकताओं के होने पर फर्म का भंजन (Dissolution of the firm on happening of certain contingencies) --कभी-कभी किन्हीं विशेष आकस्मिकताओं के होने पर फर्म विघटित हो जाती है, जैसे-

(अ) जहाँ फर्म किसी निश्चित अवधि के लिए गठित की गयी है, तो उस अवधि के व्यतीत (Expire) हो जाने पर,

(ब) जहाँ कि भागिता फर्म एक या एक से अधिक समुद्यमों (Adventures) या उपक्रमों (Undertakings) के लिए गठित की गयी है, तो उसके या उनके पूरा हो जाने पर,

(स) फर्म के किसी भागीदार की मृत्यु हो जाने पर, (द) फर्म के किसी भागीदार के दिवालिया करार दिये जाने पर

उपरोक्त आकस्मिताओं के घटित होने पर फर्म तभी विघटित होगी, जबकि इसके विपरीत भागीदारों के मध्य कोई संविदा न हो। यदि कोई विपरीत संविदा है, तो फिर उस संविदा की शर्तों का पालन होगा।

(4) इच्छाधीन भागिता की दशा में सूचना देने से फर्म का भंजन (Dissolution of fira by giving a notice in the case of partnership at will)--

इच्छाधीन भागिता की दशा में किसी भी भागीदार द्वारा अन्य सभी भागीदारों को फर्म को विघटित कर देने के अपने आशय की लिखित

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

सूचना (Notice in writng) देने से फर्म विघटित हो जायेगी। यह फर्म उस दिन से विघटित हुई मानी जायगी, जो तारीख सूचना में फर्म के गंजन की तारीख के रूप में स्पष्ट की गयी है। लेकिन जहाँ सूचना में ऐसी कोई तारीख नहीं दी गयी है, वहाँ फर्म उस दिन से विघटित हुई मानी जायेगी जिस दिन से उस सूचना का संवहन हुआ है।

(5) न्यायालय द्वारा फर्म का मंजन (Dissolution of firm by the Court) -- उपरोक्त दशाओं में फर्ग रक्तः ही भागीदारों द्वारा विघटित कर दी जाती है, किन्तु कुछ दशाएं ऐसी हैं, जिनमें न्यायालय द्वारा फर्म का विघटन होता है। फर्म के किसी भी भागीदार द्वारा वाद प्रस्तुत किये जाने पर अदालत निम्नलिखित कारणों में से किसी भी कारण के आधार पर फर्म को भंजन करने का आदेश पारित कर सकती है।

(अ) जहाँ फर्म का कोई भागीदार पागल (Lunatic) हो जाता है, तो फर्म के किसी भागीदार अथवा पागल भागीदार के मित्र या प्रतिनिधि द्वारा वाद प्रस्तुत किये जाने पर न्यायालय फर्म को भंजन करने का आदेश दे सकता है।

(ब) फर्म के किसी भागीदार के स्थायी रूप से अयोग्य (Permanently incapable) हो जाने पर जिससे कि वह अपने कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ रहता हो, फर्म के किसी भागीदार द्वारा वाद प्रस्तुत किये जाने पर न्यायालय फर्म के विघटन का आदेश दे सकता है। स्थायी अयोग्यता, अन्धा होने पर, लकवा होने पर अथवा उम्र कैद होने पर भी विघटित हो सकती है।

(स) फर्म के किसी भागीदार के दुराचरण के कारण जिससे कि फर्म के कारोबार के चलाने पर विपरीत प्रभाव पड़ने की आशंका हो, फर्म के किसी भागीदार द्वारा वाद प्रस्तुत किये जाने पर न्यायालय फर्म को विघटित करने की आज्ञा दे सकता है। दुराचरण फर्म के कारोबार से सम्बन्धित मामलों के विषय में ही होना आवश्यक नहीं है। यह बाहर के मामलों के सम्बन्ध में भी हो सकता है।

(6) फर्म के किसी भागीदार द्वारा भागिता करार को भंग करने पर फर्म का भंजन (Dissolution of firm by breach of partnership agreement by a partner) - - जहाँ फर्म का कोई भागीदार जानते हुए निरन्तर फर्म के प्रबन्ध से सम्बन्धित विषयों में अथवा कारोबार के चलाने से सम्बन्धित विषयों में करारों को भंग करता है या कारोबार से सम्बन्धित मामलों में अपना इस प्रकार का व्यवहार करता है कि अन्य भागीदारों को उसके साथ भागिता कारोबार को चलाना सही प्रकार से असम्भव है, तो न्यायालय फर्म के किसी अन्य भागीदार द्वारा वाद प्रस्तुत किये जाने पर फर्म के विघटन की आज्ञा दे सकता है।

(7) किसी भागीदार के हिस्से के हस्तान्तरण, कुर्की अथवा विक्रय होने पर फर्म का भंजन (Dissolution of firm by transfer, attachment or sale of partner's share) -- जहाँ फर्म के किसी भागीदार ने फर्म में अपना सम्पूर्ण हित किसी दूसरे व्यक्ति को हस्तान्तरित कर दिया है या उस पर न्यायालय द्वारा प्रभार (Charge) होने की आज्ञा दे दी है या मालगुजारी (Land Revenue) की बकाया राशि (Arrears) की वसूली में उसे बेचने की दे दी है तो न्यायालय किसी अन्य भागीदार द्वारा वाद प्रस्तुत किये जाने पर फर्म को विघटित करने का आदेश पारित कर सकता है।

(8) फर्म के कारोबार के हानि में चलने पर फर्म का भजन (Dissolution of firm when the business of the firm runs at a loss)--जहाँ कि फर्म का व्यवसाय हानि के अलावा लाभ पर नहीं चलाया जा सकता, वहाँ भी न्यायालय फर्म के किसी भी भागीदार द्वारा वाद • प्रस्तुत किये जाने पर फर्म को विघटित करने का आदेश दे सकता है।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

P.G.S NATIONAL COLLEGE OF LAW, MATHURA

Paper-VI **Paper Name- Contract II** **Unit -5**

Q2. भागीदारों के एक दूसरे के साथ सम्बन्धो का परिक्षण उनके अधिकारों एवं सम्बन्धो के आधार पर कीजिये ।

उत्तर--भागीदारों के साधारण कर्तव्यों के विषय पर भागिता अधिनियम की धारा 9 में उल्लेख है कि "मागीदार फर्म के कारोबार को सर्वाधिक सामान्य प्रलाभ के लिए चलाने, एक-दूसरे के प्रति न्याय-परायण और निष्ठावान रहने और किसी भागीदार या उसके वैध प्रतिनिधि को सच्चा लेखा देने और फर्म पर प्रभाव डालने वाली सब बातों की पूरी जानकारी देने के लिए बाध्य है।"

वैसे तो फर्म में भागीदारों के आपसी कर्तव्य उनके द्वारा किये गये करार से निश्चित होते हैं, जिस कारण से भागिता जन्म लेती है। लिखित या मौखिक जो भी करार हो, उससे भागीदारों के लिए जो कर्तव्य स्पष्ट कर दिये जाते हैं, उन्हें करार की शर्तों का पालन करते हुए उन कर्तव्यों को पूरा करना होता है। लेकिन ऐसे करार द्वारा वर्णित कर्तव्यों के अलावा भी भागीदारों के फर्म और अन्य भागीदारों के प्रति कुछ और कर्तव्य भी होते हैं, जो 'साधारण कर्तव्य' (General Duties) कहलाते हैं। इनका उल्लेख धारा 9 में किया गया है, जो कि उल्लिखित (Above stated) है। इस धारा के अनुसार भागीदारों के साधारण कर्तव्य निम्न प्रकार हैं

(1) फर्म के लिए यथासम्भव लाभ प्राप्त करना (To use due deligence to gain possible profits)--यह हरेक भागीदार का कर्तव्य है कि वह हर सम्भव प्रयत्न द्वारा फर्म को उन सब लाभों से लाभान्वित कराये जो उसकी सामर्थ्य (power) में हैं। उसे फर्म के कारोबार को लाभ प्राप्त कराने के लिए पूर्ण ज्ञान और चतुराई से कार्य करना चाहिए। उसे फर्म के कारोबार से सम्बन्धित किसी भी व्यवहार (Transaction) को अपने निजी लाभ (personal advantage) के लिए नहीं करना चाहिए। यदि वह ऐसा कोई व्यवहार करता है और उसे उससे लाभ प्राप्त होता है, तो उसे प्राप्त किए गए उस सम्पूर्ण लाभ को फर्म को लौटाना होगा।

(2) परस्पर न्यायशील एवं निष्ठावान होना (To be just and faithful to each other) --भागीदारों के परस्पर सम्बन्ध उनके आपसी विश्वास (Mutual Confidence) पर आधारित हैं। वे एक-दूसरे पर विश्वास करते हैं। और विश्वास के आधार पर ही कारोबार का संचालन करते हैं। इस कारण प्रत्येक भागीदार का यह सामान्य कर्तव्य है कि वह एक-दूसरे के प्रति न्याय-परायण और निष्ठावान (Faithful) रहे। उन्हें एक-दूसरे के प्रति द्वेष की भावना (III Feeling) नहीं रखनी चाहिए। उनका कर्तव्य है कि वह दूसरे के हित में ही अपना हित देखें। उन्हें 'सब एक के लिए और एक सब के लिए' (All for one and one for all) के विचार के साथ कारोबार का संचालन करना चाहिए।

3) सही हिसाब-किताब देने का कर्तव्य (Duty to render true accounts) --एक भागीदार का यह भी कर्तव्य है कि वह फर्म के अन्य भागीदारों को फर्म के हिसाब-किताब से • सम्बन्धित समस्त लेखा पुस्तकें सुपुर्द कर दे। यही नहीं यदि उसके पास हिसाब-किताब करने के उपरान्त फर्म का कुछ धन बकाया के रूप में (in Balance) है, तो उस धन को भी भागीदारों को सौंप देना चाहिए। उसका यह भी कर्तव्य है कि वह फर्म के अन्य भागीदारों के पूछे जाने पर फर्म के हिसाब-किताब और आवश्यक कागजातों के सम्बन्ध में स्पष्टीकरण (Clarification) देने के लिए हमेश तत्पर रहे और उनके पूछने पर उन्हें पूर्ण स्पष्टीकरण दे और उन्हें पूरी प्रकार सन्तुष्ट करे।

(4) व्यापार से सम्बन्धित सही जानकारी देना (To render fulll information affecting the firm)--भागीदारों के आपसी सम्बन्ध अभिकरण (Agency) की भावना पर आधारित हैं और इस प्रकार प्रत्येक भागीदार एक-दूसरे का मालिक और अभिकर्ता होता है। इस स्थिति में एक भागीदार का यह कर्तव्य है कि वह अन्य भागीदारों के उन सब सूचनाओं से परिचित (Aware) कराये, जो सूचनाएँ उसके ज्ञान में हैं और जिनसे फर्म प्रभावित होती हो। उदाहरण के लिए, एक फर्म किराने (Grocery) में व्यापार करती है, जिसमें 'अ', 'ब' और 'स' तीन भागीदार हैं। 'स' को भविष्य में मिर्च (Pepper) के दामों में तेजी की सूचना मिलती है, जो अन्य भागीदारों को नहीं है, तो ऐसी दशा में 'स' का यह कर्तव्य है कि वह मिर्च के दामों में तेजी की सूचना अन्य भागीदारों को भी दे दे। इसी प्रकार यदि फर्म किसी अमुक व्यापारी के साथ व्यवहार करने जा रही है, जिसकी खराब आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में 'स' को जानकारी है, जबकि 'अ' और 'ब' उससे अनभिज्ञ (Unknown) हैं, तो ऐसी स्थिति में भी स' का यह कर्तव्य है कि वह उस व्यापारी की खराब आर्थिक स्थिति की सूचना 'अ' और 'ब' को दे दे।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

ड्यूब बनाम इंगलिश के वाद में 'अ' और 'ब' ने खान खरीदने के लिए संविदा की। संविदा के अनुसार, खान 50,000 पौण्ड में खरीदी गयी और उसे 5,000 पौण्ड लाभ में बेचने के लिए तय हुआ। 'ब' को यह काम सौंपा गया, जिसने एक कम्पनी को खान बेच दी, किन्तु उसका नाम नहीं बताया। वास्तव में 'ब' उस खान को खरीदने का इच्छुक था, जिसकी कि 'अ' को जानकारी नहीं थी। अतः 'ब' द्वारा अर्जित लाभ 'अ' को लौटा देना चाहिए।

साधारणतया भागीदारों के परस्पर अधिकार और कर्तव्य उसके द्वारा किये गये करार से निश्चित होते हैं, लेकिन जहाँ ऐसे करार में सम्पूर्ण अधिकार और कर्तव्यों का समावेश नहीं हो पाता या जहाँ ऐसे करार की अनुपस्थिति रहती है, वहाँ भागीदारों के आपसी सम्ब • भारतीय भागिता अधिनियम की धाराओं द्वारा नियमित होते हैं। कारोबार के संचालन सम्बन्ध में भागीदारों के आपसी सम्बन्ध भागिता अधिनियम की धाराओं 12ए, 12बी, 12सी, 12डी में निश्चित किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं

भागीदारों के बीच की संविदा के अधीन रहते हुए प्रत्येक भागीदार को कारोबार संचालन में भाग लेने का अधिकार है। - [धारा 12]

इस उपधारा के अनुसार प्रत्येक भागीदार को फर्म के कारोबार के प्रबन्ध संचालन में लेने और अपने विचार या राय प्रकट करने का अधिकार प्राप्त है। यह बात इस सम्बन्ध में अर्थ नहीं रखती कि उसका कारोबार के लाभा-लाग में सबसे कम अनुपात (Ratio) है। इ भागीदार फर्म के कारोबार के प्रबन्ध के सम्बन्ध में सह-विस्तृत (Co-extensive) अधिक रखता है; क्योंकि यह माना जाता है कि फर्म का कारोबार सभी भागीदारों का कारोबार (डौनाल्डसन बनाम विलियम्स 1833)। यदि अन्य भागीदार फर्म के किसी भागीदार को फर्म कारोबार के संचालन में भाग लेने से रोकते हैं, तो वह भागीदार अपने ऐसे अधिकार की रक्षा लिए न्यायालय की शरण ले सकता है और न्यायालय इस सम्बन्ध में उसकी सहायता करता (गनपत बनाम अन्नाजी, 1899)। एक भागीदार जिसने फर्म के कारोबार में अपने हित को भागीदार को हस्तान्तरित कर दिया है, ऐसे हस्तान्तरण करने मात्र से फर्म के कारोबार के संचार में भाग लेने के अधिकार से वंचित (Preclude) नहीं कर दिया जाता (रो बनाम वुड) ।

प्रत्येक भागीदार बाध्य है कि वह कारोबार के संचालन में अपने कर्तव्यों का उद्यमपूर्व पालन करें। {धारा 12}

प्रत्येक भागीदार का यह कर्तव्य है कि वह कारोबार के संचालन से सम्बन्धित प्रत्येक के को पूर्ण चतुराई एवं परिश्रम से पूरा करे एवं अपने ज्ञान और फन (Knowledge and Skill) फर्म को प्रत्येक प्रकार से लाभान्वित कराये। उसे कारोबार के संचालन के सम्बन्ध में किये गये का के लिए फर्म से कोई पारिश्रमिक (Remuneration) प्राप्त नहीं करना चाहिए, यद्यपि वह अ सभी भागीदारों की अपेक्षा अधिक कार्य करता हो। लेकिन यदि भागीदारों ने सबकी सहमति से निश्चित कर लिया है कि उसको अधिक कार्य करने के प्रतिफलस्वरूप पारिश्रमिक दिया जायगा वह उस पारिश्रमिक को प्राप्त करने का अधिकारी होगा।

कारोबार से संशक्त मामूली बातों के बारे में उद्भूत होने वाले किसी मतभेद का विनिय 'मागीदारों के बहुमत से किया जा सकेगा और प्रत्येक भागीदार मामले के विनिश्चित किये जाने पहले अपनी राय अभिव्यक्त करने के लिए अधिकारवान होगा, किन्तु कारोबार के रूप में तब्दीली सब भागीदारों की सम्मति के बिना नहीं कि जा सकेगी। [धारा 12]

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

यदि फर्म के कारोबार से सम्बन्धित साधारण मामलों के सम्बन्ध में भागीदारों में आप मतभेद हैं, तो उसका निश्चय बहुमत (Majority) से किया जायेगा। ऐसे बहुमत से यह अपेक्षा जायगी कि वह पूर्ण सद्भावना (Good faith) से कार्य करेगा एवं मामले का निश्चय होने से प प्रत्येक भागीदार को उसके सम्बन्ध में अपनी राम (Opinion) प्रकट करने का अधिकार हो • लेकिन जहाँ फर्म के कारोबार के रूप (Nature) में परिवर्तन के सम्बन्ध में कोई मामला है उस पर मतभेद है, तो वहाँ बहुमत की बात लागू नहीं होगी। ऐसी दशा में एक भागीदार भी, परिवर्तन करने के विपक्ष में है, अन्य भागीदारों को, जो परिवर्तन करने के पक्ष में हैं, फर्म, कारोबार के रूप में परिवर्तन करने से रोक सकता है। इस सिद्धान्त के आधार पर एक मामले यह निर्णीत किया जा चुका है कि फर्म के कारोबार के स्थान के विषय पर जहाँ फर्म का कारोब ॐ चलना है, सब भागीदारों का एक साथ सहमत होना आवश्यक है।

इस उपधारा के साथ भास 33 उपधारा का उल्लेख करना अनावश्यक न होगा कि रों की ऐसी बहुसंख्या (Majority) जो सदभावना से कार्य कर रही हो, किसी की भागीदार निष्कासित नहीं कर सकेगी, जब तक कि अनुबंध द्वारा ऐसी शक्ति उसको प्राप्त नहीं हो।

प्रत्येक भागीदार को फर्म की पुस्तकों में से किसी तक पहुँचने का और उनके निरीक्षण करने उनमें से नकल करने का अधिकार है।(धारा 12 डी)

प्रत्येक भागीदार को भले ही वह क्रियाशील (Active) गागीदार हो या निष्क्रिय (Dor ant), फर्म की बाता पुस्तकों तक पहुँचने का, उनका निरीक्षण करने का और उनकी नकल करने अधिकार प्राप्त है (टेलर बनाम रूनहेल)।

अपने इस अधिकार का प्रयोग वह अपने प्रतिनिधि या एजेण्ट द्वारा करना चाहे तो कर कता है, बशर्ते कि अन्य भागीदारों को उस एजेण्ट को खाता पुस्तकें देखने पर, उनका निरीक्षण ने पर उनकी प्रतिलिपि लेने पर कोई आपसि (Objection) न हो। इसके सम्बन्ध में एक जो अन्य भागीदारों की सहमित से फर्म के लागों में सम्मिलित कर लिया गया है, के धकारों का वर्णन करना महत्वपूर्ण है। ऐसा अवयरक फर्म के खातों का निरीक्षण कर सकता है, की जाँच कर सकता है, किन्तु अन्य पुस्तकों तक पहुँचने का अधिकार नहीं रखता, क्योंकि उन तकों में ऐसी कई गुप्त बातें हैं, जो फर्म के मागीदारों के विचार से खुलनी (Disclose) नहीं हिए, ताकि को हानि होने सम्भावना उत्पन्न न हो।

भागीदारों के पारस्परिक अधिकार और दायित्व के सम्बन्ध में भारतीय भागिता धिनियम की धारा 13 उपबंध करती है, जो निम्न प्रकार है-
'भागीदारों के बीच की संविदा के अधीनस्थ'
(क) कोई भी भागीदार फर्म के कारोबार के संचालन में कार्य करने के लिए पारिश्रमिक करने का अधिकारी नहीं है।
(ख) भागीदार फर्म के लाभों में समान रूप से अंश प्राप्त करने के अधिकारी हैं और फर्म हुई हानियों में समान रूप से अंशदान देने के लिए दायी हैं।
(ग) यदि कोई भागीदार अपने द्वारा लगायी गयी पूँजी पर ब्याज प्राप्त करने का अधिकारी तो ऐसा व्याज केवल लाभों में ही दिया जायगा।
(घ) कोई भागीदार के अनुसार फर्म में अपनी पूँजी लगाने के अतिरिक्त कोई और भी फर्म को देता है, तो वह उस पर 6 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज प्राप्त करने का अधिकारी
(ङ) (1) फर्म के कारोबार के साधारण और उचित रूप से संचालन में, और
(2) फर्म की हानि से रक्षा करने के लिए आपात स्थिति के समय में कोई भी ऐसा कार्य करने जो कि एक साधारण बुद्धि का मनुष्य उन्हीं परिस्थितियों में अपने निजी मामले में करता,
भागीदार द्वारा की गयी देनगियों या उत्पन्न दायित्वों के लिए उसकी क्षतिपूर्ति करेगा, और (च) भागीदार फर्म के कारोबार के संचालन में अपने *द्वारा जान-बूझकर की गयी लापरवाही लिए फर्म को हुई हानि के सम्बन्ध में फर्म की क्षतिपूर्ति करेगा।*

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

अतः उपर्युक्त धारा भागीदारों के पारस्परिक अधिकारों और दायित्वों के बारे में निम्न कार से कहती है-

(क) व्यापार के प्रबन्ध के लिए कोई पारिश्रमिक नहीं (No remuneration) - गागिता ●अधिनियम की धारा 13 भागीदारों के परस्पर अधिकार और कर्तव्यों का हर प्रकार से उल्लेख करती है। यह धारा भागीदार को फर्म के प्रति भी बाध्य करती है और फर्म को भी भागीदार के प्रति • बाध्य बनाती है। इस धारा के अनुसार कोई भी भागीदार फर्म के कारोबार के संचालन में कार्य करने के लिए फर्म से कोई भी पारिश्रमिक प्राप्त करने का अधिकार नहीं रखता। प्रत्येक भागीदार को फर्म का कारोबार समझते हुए कार्य करना चाहिए। अतः वह फर्म से इसके लिए कोई भी मेहनताना भले ही कमीशन के रूप में या वेतन के रूप में या अन्य किसी रूप में प्राप्त करने का अधिकार नहीं रखता, भले ही वह फर्म के कारोबार के संचालन में जो कार्य कर रहा हो, वह अन्य
भागीदारों की तुलना में अधिक हो (हसानन्द बनाम बासरमल A.I.R. 1982, सिंध 146) । लेकिन सब भागीदार आपसी सहमति से किसी भागीदार के लिए ऐसे अधिकार का भी सृजन कर सकते हैं कि कोई अमुक भागीदार फर्म के कारोबार में कार्य करने हेतु अलग से पारिश्रमिक प्राप्त करने का अधिकारी होगा। ऐसी दशा में धारा 13 (क) की व्यवस्था लागू नहीं होगी।

(ख) हानि-लाभ में बराबर भाग का अधिकारी (Right to share profit & loss equally) -- सामान्यतया भागीदार आपसी करार करके यह तय कर लेते हैं कि उनके मध्य लाभा लाभ का अनुपात (Ratio of profit & loss) क्या रहेगा? लेकिन जहाँ भागीदारों के मध्य ऐसा कोई करार नहीं है, वहाँ धारा 13 (ख) के अनुसार यह माना जायगा कि प्रत्येक भागीदार का लाभा लाभ में अनुपात समान (Equal Ratio) होगा। यदि कोई भागीदार ऐसा कहता है कि यह अनुपात समान नहीं है, तो अपनी बात को सिद्ध करने का भार (Burden of proof) उस पर होगा (जादवराम बनाम बुल्लोराम, 1889, 20 कलकत्ता 281) ।

अधिनियम में लाभ (Profit) की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं दी गयी है, लेकिन विभिन्न विद्वानों के मतानुसार कहा जा सकता है कि लाभ से आशय लगाये गये धन (Advance) के ऊपर अतिरिक्त प्राप्ति (Excess Return) से है।

जहाँ तक हानि (Loss) का प्रश्न है कि हानि भी भागीदारों द्वारा उसी समान अनुपात मे ¨सहन की जायगी, जिस समान अनुपात में वे लाभ प्राप्त करते हैं। ऐसा नहीं हो सकता कि भागीदारों के मध्य लाभ और हानि असमान अनुपात (Unequal ratio) में बाँटी जाय, जब तक कि इसके सम्बन्ध में कोई विशेष करार नहीं किया गया हो (मामराज बनाम गोपालचन्द, 1908 पंजाब) । यदि लाभ समान अनुपात से नहीं बाँटे जाते हैं, तो किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में हानि भी लाभ के अनुपात में बाँटी जायगी, यह बात महत्वहीन होगी कि किसी भागीदार ने फर्म में अपनी पूँजी के अतिरिक्त अन्य धन जुटाया है (पितचिह्ना चेट्टियार बनाम सुब्रह्मण्यम 1935, 58 मद्रास 25) । यह जरूरी नहीं है कि फर्म में किसी भागीदार के लाभ का अनुपात भी वही हो, जो हानि का है। भागीदार आपसी करार करके इसमें अन्तर भी रख सकते हैं।

(ग) पूँजी पर ब्याज (Interest on Capital)--साधारणतया किसी भी भागीदार को अपने द्वारा फर्म में लगायी गयी पूँजी पर ब्याज प्राप्त करने का अधिकार नहीं होता, जब तक कि इसके लिए कोई विशेष करार नहीं किया गया हो या भागीदारों के व्यवहार से ऐसा ज्ञात न हो कि उनके मध्य इसके लिए कोई गर्भित करार है या व्यापार की रीति-रिवाज (Trade Custom) के अनुसार ऐसा ब्याज न दिया जाता हो।

(घ) अतिरिक्त धन पर ब्याज (Interest on advance)--जहाँ भागीदार ने अपनी पूँजी के अलावा फर्म में धन दिया है, तो ऐसा धन फर्म को प्राप्त ऋण के रूप में समझा जायगा और वह मागीदार उस अतिरिक्त धन पर 6% वार्षिक का ब्याज प्राप्त करने का अधिकारी बन जाता है।

दरिया चेट्टी बनाम वलची माधविया A.L.R. 1961, मद्रास 478) । • यदि कोई भागीदार फर्म के रूपये को जान-बूझकर गलत तरीके से अपने पास रोकता है या ने कर्तव्यां को भंग करते हुए लाभ कमाता है, तो उसे उस धन को ब्याज सहित फर्म को लौटाना

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

जहाँ भागीदार फर्म में लगायी गयी अपनी पूँजी पर व्याज प्राप्त करने का अधिकारी है, कहाँ व्याज फर्म के लाभों में से देय होगा।

(ङ) क्षतिपूर्ति कराने का अधिकार (Right to be indemnified by the m) -- (1) यदि कोई भागीदार फर्म के कारोबार में साधारण और उचित रूप से संचालन करने अपनी ओर से कुछ भुगतान करता है, या उसके सम्बन्ध में अपना दायित्व उत्पन्न करता है, तो फर्म से, जब तक इसके विपरीत कोई संविदा न हो उस भुगतान अथवा दायित्व के लिए नुकसान ने का अधिकार रखता है।

(2) इसी प्रकार यदि किसी भागीदार ने आपात के समय मैं (In an Emergency) फर्म कारोबार या सम्पत्ति को हानि से बचाने हेतु किसी कार्य को इस प्रकार किया है कि एक साधारण तष्क का व्यक्ति उन्हीं परिस्थितियों में अपने निजी मामले में करता और ऐसे कार्य करने में उस गीदार ने अपनी ओर से कुछ भुगतान किया है या उसके सम्बन्ध में अपना दायित्व उत्पन्न किया तो वह फर्म से जब तक इसके विपरीत कोई संविदा न हो, उस भुगतान अथवा दायित्व के लिए सान पाने का अधिकार रखता है।

भारतीय भागिता अधिनियम की धारा 21 के अनुसार प्रत्येक भागीदार फर्म को किसी भी से बचाने के लिए सभी आवश्यक कार्य करने का अधिकार रखता है। यह प्रत्येक भागीदार के में है कि वह फर्म की हानि से रक्षा करे और यह उसका अधिकार है कि इस प्रकार से रक्षा करने वह जो भी अपनी तरफ से भुगतान करेगा या अपने ऊपर दायित्व लेगा, उसकी भरपाई फर्म से ले।

(च) साझेदार द्वारा जान-बूझकर की गयी असावधानी के लिए क्षतिपूर्ति का दायित्व iability to indemnify the firm for loss caused by wilful neglect)--s गीदार अपने द्वारा जान-बूझकर की गयी लापरवाही से फर्म को जो हानि पहुँचायेगा, उसकी तपूर्ति करेगा।

जैसा कि स्पष्ट है कि भागिता में भागीदारों के बीच एजेन्सी के सम्बन्ध का अस्तित्व existence) पाया जाता है। इस आधार पर प्रत्येक भागीदार एक-दूसरे का मालिक और अभिकतां ता है। इस स्थिति में वह अपने उन सभी कार्यों से जो उसने साधारण रूप से कारोबार के चालन में कारोबार के क्षेत्र एवं उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए किये हैं, फर्म को बाध्य (Liable) करता है। यद्यपि उसने अपने द्वारा किये गये कपट, लापरवाही या भूल से किसी तीसरे पक्षकार को नि पहुँचायी है, तब भी फर्म धारा 26 एवं 29 को देखते हुए उस हानि के लिए तीसरे पक्षकार के दायी है। यदि कोई भागीदार अपने द्वारा जान-बूझकर की गयी लापरवाही से फर्म के अन्य गीदारों को हानि पहुँचाता है, तो उसे उस हानि की पूर्ति करनी होगी **{बनवारी लाल बनाम शेख सुकरुल्ला (1940)19 पटना 1 }**

Q3. आने वाला भागीदार कौन होता है? एक भागीदारी फर्म में आने वाले भागीदारी के प्रवेश करने के तरीको को समझाइये ।

उत्तर- भागिता का सम्बन्ध संविदा से उत्पन्न होता है और यह संविदा विश्वास पर आधारित होती है। पक्षकारों द्वारा परस्पर विश्वास के साथ संविदा किया जाता है और उसके परिणामस्वरूप ही भागिता अस्तित्व (Existence) में आती है। यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक व्यक्ति में विश्वास हो। इस कारण कोई भी अन्य व्यक्ति अन्य भागीदारों की सहमति लिये बिना फर्म में भागीदार नहीं बनाया जा सकता। फर्म के सभी भागीदारों के सहमत होने पर ही किसी व्यक्ति को फर्म में भागीदार के रूप में शामिल किया जा सकता है। यदि फर्म के अन्य भागीदारों की सहमति प्राप्त किये बिना कोई भागीदार किसी नये व्यक्ति को फर्म में भागीदार के रूप में शामिल कर लेता है, तो उसके और व्यक्ति के मध्य उपभागिता (Sub-partnership) उत्पन्न हुई समझी जायगी और ऐसे नये व्यक्ति को फर्म में कोई अधिकार प्राप्त नहीं होगा। इसलिए फर्म में किसी नये व्यक्ति को भागीदार बनाने के लिए और फर्म में उसके अधिकारों का सृजन करने के लिए यह आवश्यक है कि उसको भागीदार के रूप में शामिल करने के सम्बन्ध में फर्म के सभी भागीदारों की सहमति प्राप्त कर जी जाय।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

भारतीय भागिता अधिनियम की धारा 31 'आने वाले भागीदार' (Introducing Part ner) से सम्बन्धित है, जिसके उपबंध निम्न प्रकार से प्रस्तुत किये जा सकते हैं-

(1) भागीदारों के मध्य हुई संविदा और धारा 30 के उपबंधों के अधीनस्थ कोई व्यक्ति विद्यमान भागीदारों की सहमति के बिना फर्म में भागीदारों की तरह शामिल नहीं किया जायगा।

(2) जो व्यक्ति फर्म में भागीदार की तरह शामिल किया गया। चारा 30 के उपबंधों के अधीन ऐसे किसी भी फर्म के कार्य के सम्बन्ध में, जो उसके भागीदार बनने से पहले किया गया था. इसके द्वारा दादी नहीं होगा।

धारा 31 की उपधारा 1 एवं 2 का स्पष्टीकरण निम्न प्रकार है-

उपधारा 1-कर्म में किसी भी व्यक्ति को फर्म में भागीदार की तरह शामिल करने पर रोक लगायी गयी है, जब तक कि उसके लिए फर्म के सभी विद्यमान भागीदारों की सहमति प्राप्त न कर ली जाय। लेकिन इस उपधारा में **भागीदारों के बीच की संविदा के और धारा 30 के उपबंधों के अधीन रहते हुए' (Subject to the contract between the partners and to the provisions of section 30)** बाबय और है, जिसका आशय है कि भागीदारों के ध्य हुई संविदा और धारा 30 के उपबंधों के अधीनस्थ (जहाँ किसी नये

व्यक्ति को फर्म में भागीदारों के रूप में शामिल किये जाने के लिए अन्य वर्तमान मागीदारों की सहमति प्राप्त करना आवश्यक न हो) किसी नये व्यक्ति को वर्तमान भागीदारों की सहमति प्राप्त किये बिना भी फर्म में भागीदार के रूप में शामिल किया जा सकता है, जहाँ कि मागीदार आपसी करार द्वारा यह तय कर लेते हैं कि उनमें से कोई एक भागीदार किसी नये व्यक्ति को वर्तमान भागीदारों की सहमति प्राप्त किये बिना फर्म में भागीदार के रूप में शामिल कर सकेगा, तो वहाँ वह भागीदार किसी नये व्यक्ति को फर्म में भागीदार के रूप में सम्मिलित कर सकता है और उस इसके लिए वर्तमान मागीदारों की सहमति प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं होती।

इस प्रकार से भागिता अधिनियम की धारा 30 के उपबंधों को देखते हुए, जहाँ कोई आवश्यक अन्य भागीदारों की सहमति से फर्म में भागिता का फायदा उठाने के लिए सम्मिलित कर लिया गया है, वहाँ ऐसे अवयरक को अपने वयस्क होने पर या इस बात की जानकारी होने पर कि वह फर्म में मागिता के फायदे में सम्मिलित कर लिया गया है, जो भी बाद की तारीख में है, उससे 6 माह के अन्दर यह विकल्प प्राप्त है कि वह फर्म में भागीदार होना तय करे अथवा न करे। इस विकल्प में जब वह भागीदार होना तय कर लेता है, तो उस फर्म में भागीदार के रूप में शामिल किये में जाने के लिए फर्म के वर्तमान भागीदारों की सहमति प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं होती।

कहने का तात्पर्य है कि जहाँ इसके विपरीत भागीदारों के मध्य कोई संविदा नहीं है एवं जहाँ धारा 30 के उपबंधों के अधीन अवयस्क के भागीदार के रूप में होने की दशा नहीं है, वहाँ किसी नये व्यक्ति को फर्म में भागीदार के रूप में शामिल करने के सम्बन्ध में आवश्यक रूप से वर्तमान भागीदार की सहमति प्राप्त करना आवश्यक है।

उपधारा 2- - फर्म में भागीदार के रूप में शामिल हुए व्यक्ति के दायित्वों से सम्बन्धित है और बतलाती है कि ऐसा व्यक्ति फर्म के उन कार्यों के लिए दायी न होगा जो उस समय किये गये थे, जबकि वह भागीदार नहीं था। लेकिन इस उपधारा में भी धारा 30 के उपबंधों के अधीन (Sub ject to the provisions of Sec. 30) वाक्य निहित है, जिसके आशय में इस वाक्य को उपधारा 2 के नियम के अपवाद-स्वरूप समझा जा सकता है। धारा 30 के उपबंधों के अधीन, जहाँ कि एक अवयस्क फर्म में भी भागीदार बनना तय कर लेता है, यहाँ उस स्थिति में वह फर्म के उन समस्त कार्यों के लिए व्यक्तिगत रूप से दायी (Personally liable) बन जाता है, जो समय से किये गये थे जबकि वह फर्म में भागिता का फायदा उठाने के लिए सम्मिलित किया गया था। इस प्रकार से उपधारा 2 का यह नियम कि फर्म में भागीदार के रूप में शामिल किया जाने वाला व्यक्ति फर्म के उन कार्यों के लिए दायी नहीं होता, जो कि उस समय किये गये थे, जबकि वह फर्म, में भागीदार नहीं था, धारा 30 के उपबंधों के अधीन उक्त दशा में लागू नहीं होता।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

धारा 30 की उपधारा 2 के नियम का एक अपवाद और भी है और वह यह कि जब आने वाला भागीदार फर्म के वर्तमान ऋणों (Existing debts) के सम्बन्ध में दायी होने के लिए अपनी सहमति प्रदान कर देता है, तब उस दशा में वह उन ऋणों के लिए भी दायी रहेगा, भले ही वह तब लिये गये थे, जबकि वह फर्म में भागीदार नहीं था। लेकिन फर्म के वर्तमान भागीदारों एवं आने वाले भागीदार के मध्य हुआ ऐसा करार फर्म के वर्तमान ऋणदाताओं (Existing creditors) को ऐसा अधिकार नहीं देता कि वह उस आने वाले भागीदार को उन ऋणों के सम्बन्ध में दायी ठहरा सकें **(Russa Engineering Works Vs. Kanara Transport Co.)**। ऐसा आने वाला भागीदार फर्म के वर्तमान ऋणों के सम्बन्ध में तभी दायी होगा, जबकि उसके शामिल होने पर गठित (Constituted) की नयी फर्म पुरानी फर्म के समस्त दायित्व स्वीकार कर ले एवं जहाँ कि ऋणदाता ने पुरानी फर्म को मुक्ति (Discharge) प्रदान कर दी हो और नयी फर्म को अपने ऋणी के रूप में स्वीकार कर लिया हो।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW